ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 359-361

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16, YEAR- June -2020

मंजूर एहतेशाम के उपन्यासों में चित्रित मध्यवर्गीय समाज की आर्थिक स्थिति

सुमन देवी

शोध अध्येत्री– हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विष्वविद्यालय, अस्थल बोहर–रोहतक (हरियाणा), भारत

Received- 25.07.2020, Revised- 27.07.2020, Accepted - 29.07.2020 E-mail: - bhupinderhlawat1981@gmail.com

सारांश : *मध्यम वर्ग, दो वर्गों के मध्य स्थित है। एक तरफ उच्च वर्ग है, तो दूसरी तरफ निम्न वर्ग। हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार, "मध्यम वर्ग सामन्तवादी व्यवस्था में नहीं पाया जाता था, क्योंकि उस समय जमींदार तथा किसान का सीधा सम्बन्ध था, किन्तु पूंजीवादी व्यवस्था ने समाज को इतना जटिल बना दिया है कि मध्यवर्ग की भी आवश्यकता हुई जो इस जटिल व्यवस्था के संघटन –सूत्र को संभाल सके। इस वर्ग में नौकरीपेशा, शिक्षक, क्लर्क तथा अन्य साधारण लोग आते है। मध्यवर्ग विशेषतः बुद्धि प्रधान वर्ग माना गया है और सामाजिक क्रान्ति के प्रायः समस्त विचारों का सर्जन मध्यवर्ग में होता है।" यह वर्ग अनेक आर्थिक समस्याओं से जूझता है। समाज के विकास में अर्थ की विशेष आवश्यकता होती है। जिस समाज की आर्थिक स्थिति जितनी अच्छी होगी, उस समाज के विकास की गति उतनी ही अधिक होगी। भारतीय समाज में जीवन के पुरुषार्थ हेतु चार तत्त्व प्रमुख माने गए है – अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष। इन चारों तत्वों का मनुष्य जीवन में अहम योगदान होता है। आज के भौतिकवादी युग में मनुष्य केवल धन के पीछे दौड़ता रहता है। उसका मुख्य उद्देश्य केवल धन को प्रापत करना ही रह गया है। जन्म से ही कुछ मूलभूत आवश्यकताएँ एवं प्रवृत्तियाँ लेकर आता है, जिसकी संतुष्टि के लिए उसे आर्थिक सन्दर्भ में प्रवेश करना पड़ता है। धर्म, दर्शन, कला, विज्ञान, साहित्य आदि सभी क्षेत्र मानव संस्कृति के इतिहास में उत्तरोतर महत्वपूर्ण स्थान रखते है, लेकिन इन सबकी आधारशीला मनुष्य की आर्थिक स्थिति है।*

कुंजीभूत शब्द– पूंजीवादी व्यवस्था, जटिल, मध्यवर्ग, संघटन, नौकरीपेशा, शिक्षक, सामाजिक क्रान्ति, विचारों।

लेखक द्वारा 'सूखा बरगद' उपन्यास के माध्यम से मुस्लिम वर्गीय समाज की आर्थिक स्थिति को उजागर किया है। अब्दुल वहीद खाँ एक वकील की नौकरी करते हैं। अल्प वेतन होने के कारण वे कभी भी रिश्वत अर्थात् हराम की कमाई से अपना घर नहीं भरते हैं। झूठ और प्रदर्शन उनके व्यक्तित्व से कोषों दूर है। वे हर हालत में अपने बच्चों को पढ़ाना–लिखाना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। इसीलिए वे अपनी बेटी रशीदा और बेटे सुहेल को अंग्रेजी स्कूल में दाखिला दिलवाते है। अंग्रेजी स्कूल में दाखिला दिलवाने पर रशीदा का मामा रशीदा की अम्मी को उनकी स्थिति का भान करवाते हुए कहता है – "क्या तुम्हारा दिमाग भी खराब हो गया है ! मालूम है उस स्कूल में लड़के–लड़कियाँ साथ पढ़ते हैं ? वहाँ दाखिल करोगी बच्चों को ? और महीने–भर की फीस कितनी होती है वहाँ की, यह भी मालूम है ? मैं कहता हूँ आखिर तुम लोगों को हो क्या गया है ! वहाँ नवाबों और जागीरदारों की औलादें पढ़ती हैं, उनके लिए वह स्कूल था हम जैसे, (कहा तो उन्होंने 'हम जैसे' था लेकिन अंदाज बिल्कुल 'तुम जैसे' कहने का था) तंगी से जिंदगी गुजारने वालों के लिए ?" वहीद खाँ को अनेक लोगों की तरह–तरह की बातें सुनने को मिलती है। लेकिन वे नहीं चाहते थे कि जिन आर्थिक समस्याओं का सामना उन्होंने स्वयं किया है वे सब समस्याएँ उनके बच्चों के सामने आए। यह बिल्कुल सत्य है कि वहीद खाँ की आय कम होने के कारण उनके बच्चे मनमानी नहीं करते हैं। यहाँ तक कि उनके बच्चों के पास स्कूल की ड्रैस के अलावा गिनती के कपड़े थे जिन्हें वे संभलकर पहनते है। रशीदा अपने स्कूल के दिनों को याद करती हुई कहती है – "स्कूल यूनिफार्म की सच्चाई मुझे उन्हीं दिनों समझ में आ सकी। अगर मन –पसंद के कपड़े पहनने की आजादी होती तो हम लोग देखने में ही कितने अलग लगते और बच्चे अपने कीमती–कीमती, नए कपड़ें पहनकर रोज़–स्कूल आते और हम, हमारे जो गिनती के कहीं आने–जाने के कपड़े है वही दोहराते रहते।"

आर्थिक तंगी के कारण वहीद खाँ बच्चों की फीस समय पर नहीं जमा करवा पाते हैं। रशीदा जब भी चपरासी के हाथों में फीस की लिस्ट देखती तभी मौन हो जाती थी। उसे क्लास में हर समय डर लगा रहता है कि नंदा टीचर उसे फीस के लिए क्लास में उठाएगी और फीस न लाने का कारण पूछेगी। रशीदा प्रत्येक बार फीस की लिस्ट को देखकर अल्लाह से प्रार्थना करने लगती थी। रशीदा स्वयं को मध्यवर्ग से सम्बन्धित मानते हुए, कल्लो और कुसुम का उदाहरण देती है – "हम लोग कल्लो और सईदा आपा,

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16, YEAR- June -2020

हब्बा बुआ और शप्पा आपा की दुनिया और कुसुम नसीमा या दीपक के पास खुद को पाते, किसी पल एकदम फिर ऊपर की दुनिया के पास पहुँच पाते। मैं सोचती हूँ जहाँ मैं थी वहाँ से कल्लो या कुसुम तक बराबर की ही दूरी थी।"

सुहेल अपनी प्रतिभा और मेहनत से इंजीनियरिंग कॉलेज में प्रवेश पा लेता है। लेकिन रशीदा को साइंस छोड़कर आर्ट्स के विषय लेकर बी०ए० करना पड़ता है। उसकी इच्छा डॉक्टर बनने की थी लेकिन वह जानती थी कि उसका पिता पहले साइंस पढ़ाने और बाद में डॉक्टरी पढ़ाने के लिए फीस का प्रबन्ध नहीं कर सकते इसलिए वह डॉक्टर बनने का ख्याल अपने दिल से निकाल देती है। रशीदा अंग्रेजी से एम०ए० करने के बाद जर्नलिस्ट बनने की सोचती है परन्तु घर की आर्थिक स्थिति उसके सपनों के मार्ग में रूकावट बनकर खड़ी हो जाती है वह कहती है – "एक जर्नलिस्ट के जूते मेरे पाँवों के लिए बहुत बड़े है।" इसके बाद वह अपने परिवार की आर्थिक रूप से सहायता करने के लिए रेडियो–स्टेशन पर एनाउंसर की नौकरी करने लगती है। इस प्रकार से कई बार विकट परिस्थितियाँ, आर्थिक संकट के कारण बच्चे योग्य होते हुए भी नहीं पढ़ पाते हैं।

'कुछ दिन और' उपन्यास के माध्यम से भी मध्यवर्गीय समाज की आर्थिक स्थिति को दर्शाया गया है। इसका नायक राजू अपने भविष्य के सुन्दर सपनों को संजोते हुए अपने वर्तमान को बुरी तरह ध्वस्त कर लेता है। उसकी वर्तमान को सुन्दर बनाने की आशा 'कुछ दिन और' में दिखाई देती है। असन्तुष्ट जीवन को जीता हुआ नायक 'और' की ही आकांक्षा करता है। राजू बेकार ही नहीं बेगार भी है। वह पूर्वजों की सम्पत्ति को पहले तो ऐशो–आराम में उड़ाता है। आए दिन 'और' की कल्पना करते हुए बेरोजगारी के साथ भुखमरी से भी जुझने लगता है। सारी चीजें उसके काबू से बाहर हो जाती है। वह एक–एक करके कार, रेफ्रिजेटर, जायदाद को भी इकाइयों में बाँटकर बेचने लगता है। इस प्रकार आर्थिक स्थिति दिन–प्रतिदिन गिरती चली गई और वह जिन्दगी से बौखला उठा। इस स्थिति पर वह कहता है, "रेगिस्तान में प्यासा ऊँ जब तक चलता है तो चलता जाता है, एक बार बैठा तो फिर उठ नहीं पाता।" राजू की अनेक कोषिषों के बाद चीजें लगातार बिगड़ती ही चली गई थी। षादी के बाद माँ से भी अलग रहने लगता है। सारी परिस्थिति के लिए राजू की माँ अपनी बहू को ही दोषी मानती है। "जान लेकर पीछा छोड़ेगी ! सब कुछ तो मिट गया, अब जिन्दा भी नहीं छोड़ेगी।" यह वह बाहर वालों को भी बताने लगी थी। इससे राजू की पत्नी घर के अन्दर ही अपने मन को बार–बार कचोटने लगती है। इस स्थिति को राजू से अवगत करना चाहती है, तो राजू भी कह उठता है जैसे सारा किया धरा पत्नी का ही हो, "मुझे सब मालूम है ! एक दिन यह तो होना ही था ! मैं ही उल्लू हूँ जो तुम्हारे लिए सब कुछ बरबाद करने पर तुटा बैठा हूँ ! माँ और बहन तक से अपने सम्बन्ध खतम कर लिए। तुम साफ–साफ क्यों नहीं बता देती कि क्या चाहती हो ? बताओ ? चुप क्यों हो ?' आर्थिक स्थिति के दयनीय चलते हुए माँ–बेटे द्वारा बार–बार बहू को ही जिम्मेदार समझाया जाता है जैसे सारा किया धरा उसी का हो। इस प्रकार राजू एक बच्चे का पालन–पोषण करने में भी असमर्थ है। राजू की पत्नी दूसरा गर्भधारण कर लेती है। इस दूसरे बच्चे पर राजू अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहता है, "तुम तो नौ महीने बाद छुटकारा पा लोगी, उसके बाद तो मुझे ही पालना है, मुझे अपना खून पानी करना है। और फिर गलती क्या है ? हम लोगों ने शादी की है, हम चाहेंगे तो बच्चा होगा, जब हम पाल ही नहीं सकते... तो हम एवॉर्शन तो कर ही सकते है।" इस तरह आर्थिक स्थिति कमजोर होने पर एक बच्चा ही भारी लगने लगता है। दूसरे का तो सोच पाना भी मुश्किल होता है। आज यह मध्यवर्गीय समाज की आर्थिक स्थिति ओर भी शोचनीय हो गई है। जिसका प्रभाव हमारे सामाजिक सम्बन्धों पर भी पड़ता है।

'बशारत मंजिल' के माध्यम से भी मध्यवर्गीय समाज की आर्थिक स्थिति को चित्रित किया गया है। मिर्जा जमाल बेग अपने जमाने के जाने–माने लोगों में गिने जाते है। आजादी की पहली लड़ाई में ही ये अपनी जान–माल को बचाकर भोपाल शहर में बस गए थे। दिल्ली के खात्मा होते हुए भी स्वयं इन्होंने अपनी आँखों से देखा था। इस लड़ाई में तीनों बेटे मौत के घाट उतर गए थे, दामाद जिशान अली भी खत्म हो गए थे। केवल बची थी, जहाँआरा बेग और दो उसके लड़के, बन्दाअली खान और संजीदा सोज। मिर्जा जमाल बेग के सामने ही उनकी हवेली बशारत मंजिल टुकड़ों–टुकड़ों में बिकी थी। इस पर मिर्जा जमाल बेग कहते है, "ऐसा जमाने का तकाजा ! जिंदगी में पहली बार देखा था बशारत यूँ टुकड़ा–टुकड़ा !" इस प्रकार मानव की सबसे बड़ी आवश्यकता है अपने लिए दो वक्त की रोटी जुटाना और उस रोटी का जुगाड़ करने के लिए धन एकत्र कर पाना। अन्तिम समय में बशारत मंजिल ही अपनी पहचान खोती गई। उसकी पहचान ही अर्थ के रूप में बिखरती चली गई थी। जो कि अपने जमाने में एक पहचान हुआ करती थी। संजीदा की तीनों बेटियाँ भी इसी में पली–बढ़ी थी लेकिन नष्ट होती बशारत मंजिल के उनका भी योगदान रहा था। यहाँ तक की अमीना और

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16, YEAR- June -2020

संजीदा ने उधार लेकर भी इनका खर्चा चलाना चाहा था। फिर भी बिल्लो व बिब्बो की बढ़ती खर्ची को देखकर संजीदा ने कहा था, "उधार लेकर भी वह अपने परिवार को खुश नहीं कर पाता है और ये खुशियाँ उन्हें मिलती है जिन्हें कुरबानी को बोझ की तरह कबूल किया होता है।" इस तरह से आर्थिक स्थिति समाज में मध्यवर्गीय व्यक्ति को बोझिल लगने लगती है जहाँ भौतिक अभाव के कारण चिंता, क्षोभ आदि का शिकार होता चला जाता है।

'दास्तान–ए–लापता' उपन्यास के द्वारा भी मध्यवर्गीय समाज की आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डाला गया है। उपन्यास में जमीर को केन्द्र बनाया गया। यह एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने वर्तमान में कुछ नहीं है, भविष्य का तो पता नहीं है, हे तो सिर्फ अतीत। शराफत मियाँ इनके पिता ही के खर्चे पर सारा घर पलटा है। शराफत मियाँ ने जमीर अहमद खाँ की हथेली पर पाँच सौ रूपये रखने शुरू किए थे, बढ़ते खर्चों के कारण ये आठ सौ रूपये होते चले गए थे। जमीर अहमद खान का मानना है कि उनमें कोई ऐसी बीमारी हे जिसका इलाज किसी डॉक्टर के पास नहीं है। शराफत मियाँ एक कबाड़ी की दुकान चलाते है जिसमें जमीर के हाथ न बँटाते देख वह कह उठते है, "काहे की मेहनत ! वह जब भी इस तरह मासूम बनकर सोचने की कोशिश करता है तो एक आवाज अंदर से डाँटती है – ज़मीर अहमद खान, तेरे असली ज़मीर को क्या हुआ ? ! कौन–सा अन्याय हुआ है तेरे साथ ?" इस प्रकार जमीर की अस्वस्थता के कारण व स्वयं को ही कोसने लगता है। जमीर अहमद की शादी रेहाना से कर दी जाती है। शादी के कुछ समय तक तो यह सब कुछ छुपाने की कोशिश करता है लेकिन रेहाना आर्थिक स्थिति के चलते जमीर को छोड़ना चाहती है। इस पर शराफत मियाँ उनके श्वसुर कहते है, "अपने शौहर की मजबूरी समझो, जो देखने में छः फुटा, गोरा–चिट्टा, अच्छी सेहत का चलता–फिरता इश्तिहार है, मगर न वह बनता न अभिनय करता, सचमुच किसी घातक रोग में मुब्तिला है। न मैं डॉक्टरों को झूठा या गलत कहना चाहता।" इस प्रकार आर्थिक अभाव दाम्पत्य सम्बन्धों को प्रभावित करता है। वह उनसे छुटकारा पाना चाहता है। फिर भी रेहाना परस्थितियों से समझौता कर लेती है और अपने भौतिक आवश्यकताओं के अभाव को 'नियती' मानकर 'दमे की खासी' के समान स्वीकार करती चली जाती है।

समाज की शोचनीय स्थिति का एक कारण महँगाई भी है। आज हर क्षेत्र में कीमतें आसमान को छू रही है। समाज का कोई भी वर्ग, मध्यवर्ग, निम्नवर्ग सभी पर महँगाई का प्रभाव दिखाई देता है। 'सूखा बरगद' उपन्यास के माध्यम से मध्यवर्गीय परिवार पर महँगाई का प्रभाव देखा जाता है। अब्दुल वहीद खाँ की मृत्यु के पश्चात् घर की सारी जिम्मेदारी रशीदा के कन्धों पर आ जाती है। रशीदा का अल्प वेतन घर की रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करने तक ही सीमित हो जाता है। रशीदा कहती है – "घर ! घर में ऐसा क्या था जिसे उल्लेखनीय कहा जा सके ? हमारा सरोकार तो सचमुच बाजार की उठती–गिरती कीमतों तक ही था। सारी जद्दोजहद रोजमर्रा के तकाजे पूरे करने तक सीमित होकर रह गई थी।"

अतः हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि सामाजिक सौहार्द और मध्यवर्गीय समाज की आर्थिक परिस्थितियों ने काफी प्रभावित किया है चाहे वह प्रभाव शिक्षा के कारण हो, चाहे महँगाई के कारण जिससे हमारे सामाजिक सम्बन्धों पर भी प्रभाव पड़ा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मंजूर एहतेशाम, बशारत मंज़िल, पृ० 18
2. वही, पृ० 37
3. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1, पृ० 361
4. मंजूर एहतेशाम, सूखा बरगद, पृ० 34
5. वही, पृ० 103
6. वही, पृ० 49
7. वही, पृ० 190
8. मंजूर एहतेशाम, कुछ दिन और, पृ० 15
9. वही, पृ० 13
10. वही, पृ० 85
11. मंजूर एहतेशाम, मदरसा, पृ० 90
12. मंजूर एहतेशाम, दास्तान–ए–लापता, पृ० 2
13. वही, पृ० 27

*****